Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language,
Online ISSN 2348-3083, SJ IMPACT FACTOR 2019: 6.251, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, APRIL-MAY, 2021, VOL-9/45

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था का स्वरूप

अखिलेश यादव
सहायक प्रोफेसर महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
वर्धा महाराष्ट्र ay9454185201@gmail.com

Paper Received On: 25 MAY 2021
Peer Reviewed On: 30 MAY 2021
Published On: 1 JUNE 2021

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

प्रस्तावना :-

भारतीय शिक्षा का बीजारोपण अतीत में आज से लगभग 4000 वर्ष पूर्व हुआ था, किंतु उसके संबंध स्वरूप के दर्शन वैदिक काल में दिखाई देते हैं। प्राचीन भारतीय मनीषी इस तथ्य से अवगत थे कि"शिक्षा व्यक्ति के सर्वांगीण विकास, समाज की चतुर्मुखी उन्नति और सभ्यता की आधारशिला है।" एफ डब्ल्यू टामस ने कहा है कि" भारत में शिक्षा, विदेशी पौधा नहीं है । संसार का कोई भी ऐसा देश नहीं है, जहां ज्ञान के प्रति प्रेम का इतने प्राचीन समय में आविर्भाव हुआ हो, या जिसने इतना चिरस्थाई और शक्तिशाली प्रभाव डाला हो ।" ऋग्वैदिक कालीन शिक्षा आजकल की भांति व्यवस्थित एवं सुसंगठित न थी। 1000 ईसा पूर्व तक परिवार ही शिक्षा का प्रमुख केंद्र बने रहे। गृह विद्यालयों में ही बालकों को साहित्य तथा व्यवसाय शिक्षा प्रदान की जाती थी ।

शिक्षा के उद्देश्य :

वैदिक काल में शिक्षा के पाठ्यक्रम को दो भागों में विभक्त किया गया था, परा और अपरा । तत्कालीन मानव के जीवन पर इनका प्रभाव दृष्टिगत होता है। परा का अर्थ था कि ज्ञान, धर्म, कर्म तथा उपासना के द्वारा ब्रह्म अर्थात मोक्ष की प्राप्ति करना । जबकि अपरा का अर्थ संगठित तथा नियोजित सामाजिक व्यवस्था का संचालन करना। स्पष्ट है कि परा के लिए अलौकिक विद्या का ज्ञान आवश्यक था तथा अपरा के लिए लौकिक विद्याओं का ज्ञान आवश्यक था। परा तथा अपरा में परा को अधिक श्रेष्ठ माना जाता था। संभवत इन्हीं कारणों से वैदिक काल में शिक्षा का एकमात्र लक्ष्य छात्रों की शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास इस तरह से करना था जिससे मोक्ष प्राप्ति के सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति की जा सके। वैदिक कालीन शिक्षा के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित थे –

1. नैतिक चरित्र का निर्माण करना

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

वैदिक कालीन शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य छात्रों के नैतिक चरित्र का निर्माण करना था जिससे उनमें अच्छे संस्कारों का विकास हो सके। शिक्षा के द्वारा वैदिक आदर्शों के अनुरूप संस्कारों को छात्रों में विकसित किया जाता था।

2. पवित्रता तथा धार्मिकता का विकास करना

वैदिक शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य मानव का आत्मिक विकास करना था । उस समय मानव जीवन को धार्मिक भाव से ओत_प्रोत परंतु अत्यधिक सरल, स्वभाविक तथा पवित्र बनाने का प्रयास किया जाता था । जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति थी ।

3. व्यक्तित्व का विकास करना

वैदिक काल में छात्रों के सर्वांगीण के विकास पर बल दिया जाता था। यही कारण है कि इस समय शिक्षा का एक उद्देश्य छात्रों के व्यक्तित्व का विकास करना भी था । शिक्षा के द्वारा छात्रों में आत्मविश्वास, सामाजिकता, नेतृत्व, आत्म सम्मान, सहनशीलता, परोपकार आज गांव का विकास किया जाता था।

4. सामाजिक कुशलता की उन्नति

वैदिक युग में छात्रों में सामाजिक जीवन की भावना विकसित करके वह स्वस्थ नागरिक बनाना भी शिक्षा का एक उद्देश्य था । छात्रों को अपनी शिक्षा पूर्ण करके ब्रह्मचर्य आश्रम के कर्तव्य का ज्ञान कराया जाता था । जिससे मैं अपने पारिवारिक व सामाजिक उत्तरदायित्व को समझ सकें तथा समाज और राष्ट्र की उत्थान सक्रिय रूप से भाग ले सकें।

5. जीविकोपार्जन के लिए तैयार करना

वैदिक शिक्षा में छात्रों को इस तरह का व्यवहारिक ज्ञान प्रदान किया जाता था कि वे अपने भावी जीवन को सुचारू रूप से चलाने में समर्थ हो सके।

अतः स्पष्ट है कि वैदिक शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का सर्वांगीण विकास करके उसे पूर्व मानव बनाना था।

6. प्रवेश

वैदिक काल में बालक की प्रारंभिक शिक्षा अपने परिवार में ही विद्यारंभ संस्कार के उपरांत ही प्रारंभ हो जाती थी। यह संस्कार 5 वर्ष की अवस्था में होता था जिसके उपरांत बालक को शिक्षा क्षेत्र में पदार्पण कराया जाता था। प्रारंभिक शिक्षा के अंतर्गत बालकों को लिखना, पढ़ना तथा गणना का ज्ञान कराया जाता था। प्रारंभिक शिक्षा सामान्य रूप से गृहो में ही प्रदान की जाती थी। लेकिन शिक्षा

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

का विधिवत प्रारंभ बालक के उपनयन संस्कार के बाद ही होता था। वैदिक काल में शिक्षा में विद्यार्थी को 'ब्रह्मचारी'की संज्ञा प्रदान की जाती थी। विद्यार्थी जीवन'उपनयन'संस्कार के बाद आरंभ होता था।

'उपनयन'शब्द का अर्थ है,'गुरु के पास ले जाना'या शिक्षा का प्रारंभ उपनयन के पश्चात ही विद्यार्थी ब्रह्मचारी कहलाता था। गुरुकुलों में प्रवेश पाने के पूर्व ही 'उपनयन'का संपन्न होना आवश्यक माना जाता था। उपनयन संस्कार प्रथम तीन वर्णों के लिए आवश्यक था ।

डा. पी एन प्रभु के शब्दों में__"हिंदू परिवार में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण से संबंधित प्रत्येक बालक कुछ धार्मिक क्रियाओं एवं संस्कारों के द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में प्रवेश करता था, जिन्हें उपनयन संस्कार के अंतर्गत रखा जाता है। इस संस्कार के द्वारा ही बालक भौतिक शरीर के स्थान पर आध्यात्मिक शरीर प्राप्त करता था। एक प्रकार से बालक का दूसरा जन्म होता था। अब वह द्विज अथवा ब्रह्मचारी कहलाने लगता था।"प्रत्येक वर्ण के लिए विद्यारंभ की विभिन्न आयु निर्धारित की गई। यह ब्राम्हण के लिए 8 वर्ष, क्षत्रिय के लिए 11 वर्ष और वैश्य के लिए 12 वर्ष निश्चित की गई थी।

मनुस्मृति में उपनयन संस्कार न करने वालों को व्रात्य कहां गया है। इस प्रकार वैदिक काल में संपूर्ण भारतीय समाज को साक्षर बनाने का प्रयास किया गया था। ब्रह्मचर्य आश्रम तथा शिक्षा काल का अंत समावर्तन संस्कार से होता था। समापवर्तक का अर्थ है वापस जाना। जब गुरु (आचार्य) के घर से शिक्षा लेकर विद्यार्थी अपने घर लौटता था तो अवसर पर यह संस्कार होता था।

शिक्षण विधि :

वैदिक काल में छात्रों को ज्ञान प्रत्यक्ष रूप से प्रदान किया जाता था। शिक्षक का प्रमुख स्थान था। शिक्षा संस्कृत भाषा में दी जाती थी। शिक्षक बौद्धिक मंत्रों का गायन करता था।, उनकी व्याख्या करता था तथा अपना मत व्यक्त करता था। उसका उद्देश्य छात्रों के द्वारा वैदिक मंत्रों का सही ढंग से उच्चारण करना तथा उसके अर्थ को समझना होता था। शिक्षण हेतु प्रश्नोत्तर, कथा, व्याख्यान, वाद विवाद आज विधियों का प्रयोग किया जाता था।

वैदिक काल में ज्ञानार्जन के मुख्य दो विधियां प्रचलित थी_ तप विधि तथा श्रुत विधि।तप विधि में छात्र स्वयं मनन , चिंतन तथा आत्मानुभूति करके ज्ञान प्राप्त करता था। इसके विपरीत श्रुति में छात्र दूसरों से सुनकर ज्ञान प्राप्त करता था। कहीं-कहीं श्रवण, मनन तथा निदिध्यासन नामक तीन अध्ययन विधियों की भी चर्चा की गई है। वैदिक काल में शिक्षा का सर्वोच्च रूप शास्त्रार्थ समूह तथा सभाओं में दृष्टिगोचर होता था जहां छात्र एवं गुरुजन एकत्रित होते थे तथा अपने अपने ज्ञान का प्रदर्शन करते थे, विचार -विमर्स एवं शास्त्रार्थ करते थे।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

पाठ्यक्रम :

वैदिक काल में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य आध्यात्मिक तथा लौकिक दोनों प्रकार की उन्नति करने से था। वैदिक कालीन पाठ्यक्रमों पर इसका प्रभाव दृष्टिगोचर होता था। वैदिक काल पाठ्यक्रम धार्मिक तथा साहित्यिक पुस्तकों से परिपूर्ण था। आध्यात्मिक एवं लौकिक विकास को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम में दोनों प्रकार के विषयों का समावेश किया गया था। कठोपनिषद में दो प्रकार की विद्याओं का उल्लेख मिलता है-

1. परा या आध्यात्मिक विद्या - इसके अंतर्गत चारों वेद, वेदांग, उपनिषद, पुराण, दर्शन तथा नीतिशास्त्र आते थे।
2. अपरा अथवा लौकिक विद्या- इसके अंतर्गत इतिहास औषधी शास्त्र, अर्थशास्त्र, ज्योतिष, ज्यामिति, तर्कशास्त्र, व्याकरण, धनुर्विद्या, शल्य विद्या, भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, प्राणी शास्त्र आ जाते थे।

उपयुक्त सभी विषय सभी छात्रों के लिए अनिवार्य नहीं थी। धार्मिक साहित्य तथा इन विषयों में कुछ सामान्य अध्ययन की उपरांत विद्यार्थी किसी विशेष विषय में योग्यता प्राप्त करता था। प्रारंभ में विद्या वर्ग अनुकूल नहीं थी किंतु उत्तर वैदिक काल में वर्ण व्यवस्था में जटिलता आने के कारण वर्णो के अनुसार शिक्षा दी जाने लगी। अतः प्रत्येक वर्ण के लिए अध्ययन के विषय निश्चित कर दिए गए। जैसे ब्राह्मणों के लिए धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन तथा धार्मिक कृत्य से संबंधित ज्ञान प्राप्त करना अनिवार्य बना दिया गया। क्षत्रियों के लिए प्रशासन तथा सैनिक शिक्षा और वैश्यों के लिए कृषि, व्यापार, हस्तकला आज विषयों को महत्व दिया गया।

इस प्रकार हम वैदिक काल में पाठ्यक्रम को दो भागों में प्राथमिक शिक्षा और उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में रख सकते हैं। प्राथमिक शिक्षा के अंतर्गत बालकों को पहले कुछ वैदिक मंत्रों का उच्चारण करना और बोलना सिखाया जाता था। तत्पश्चात उन्हें पढ़ने और लिखने की शिक्षा दी जाती थी। शिक्षा के पाठ्यक्रम में वैदिक मंत्रों का स्मरण, पढ़ना और लिखना, भाषा, साहित्य व्याकरण था। उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में परा विद्या और अपरा विद्या दोनों को स्थान दिया गया था। इस प्रकार उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में वेद, वेदांग, पुराण, दर्शन, उपनिषद, इतिहास, तर्कशास्त्र, भूगोल शास्त्र, भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र, प्राण शास्त्र तथा नीति शास्त्र आज विषयों को सम्मिलित किया गया था । इस युग में व्यवसाय और उद्योग के लिए लाभदायक शिल्प की भी शिक्षा दी जाती थी। तक्षशिला में विद्यार्थी वेदों के साथ ही साथ अट्ठारह शिल्पो की भी शिक्षा दी जाती थी। कालांतर में पूर्व समय की

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

अपेक्षा वैदिक साहित्य का अध्ययन कम हो गया। विदेशी पर्यटकों के विवरण में चार वेद, 6 वेदांगों, 14 विद्याओं, 16 कलाओं का उल्लेख मिलता है।

अध्यापक :

वैदिक शिक्षा में गुरु का स्थान सर्वोपरि था। गुरु को परमब्रह्म कहकर उनकी उपासना की जाती थी |

"गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः |

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः ||"

वैदिक शिक्षा में गुरु को महत्व दिया जाता था। गुरु के अभाव में आध्यात्मिक ज्ञान के गूढ तत्वों को समझना असंभव था । अतः इसके लिए विद्वान गुरु परम आवश्यक है । जो व्यक्ति गुरु चरणों की शरण नहीं लेता और स्वयं ज्ञान प्राप्त करने की चेष्टा करता है, वह अंधा है। इस प्रकार प्राचीन साहित्य में गुरु की अत्यधिक महिमा बताई गई है और उसे ब्रह्मा स्वरूप कहां गया है । वही व्यक्ति गुरु बनने योग्य माना गया ब्रह्मा ज्ञान प्राप्त कर चुका है।

वैदिक युग में तीन प्रकार के शिक्षक होते थे- गुरु, आचार्य तथा उपाध्याय। गुरु, उसे कहते थे जो समस्त संस्कारों को पूर्ण कर वेदों का निर्देशन देता था। मनु के कथन अनुसार आचार्य वह था जो अपने शिष्यों को वेद का ज्ञान, कल्पसूत्र तथा उपनिषद का ज्ञान निशुल्क देता था। उपाध्याय वह शिक्षक कहलाते थे जो अध्यापन के व्यवसाय को जीवन यापन के निमित्त ग्रहण करते थे तथा वह वेद के एक भाग का अध्ययन कराते थे। वैदिक कालीन शिक्षकों में निम्नलिखित योग्यताएं तथा गुणों का होना आवश्यक था -

- विद्यार्थी शिक्षक को एक आदर्श चरित्रवान व्यक्ति के रूप में देखते थे। अतः उन्हें चरित्रवान तथा ज्ञानी होना आवश्यक था।
- शिक्षक को धैर्यवान होना चाहिए तथा छात्रों के साथ उसका व्यवहार निष्पक्षता का होना चाहिए।
- उसे अपने विषय का पूर्ण ज्ञाता होना चाहिए। उसे जीवन पर्यंत अध्ययन करना चाहिए। इसके साथ उसमें अद्भुत वाक शक्ति होना चाहिए। इसके साथ उसे प्रत्युत्तर मति तथा मनो विनोदी भी होना चाहिए और अध्यापक कला में भी निपुण होना आवश्यक था।
- अपने ज्ञान तथा चरित्र से उसे छात्रों पर अमिट छाप छोड़नी चाहिए।
- उसे छात्रों को प्रोत्साहित तथा निर्देशित करना चाहिए।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

छात्र :

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था में विद्यार्थी को ब्रह्मचारी की संज्ञा प्रदान की जाती थी। विद्यार्थी जीवन' उपनयन संस्कार'के बाद आरंभ होता था। 'उपनयन' संस्कार के पश्चात ही कोई विद्यार्थी गुरुकुल में प्रवेश ले सकता था। जब वह गुरुकुल में अपने गुरु के संरक्षण में रहना शुरू कर देता था, तो उसे अंतेवासी या गुरु वासी कहा जाता था। गुरुकुल में प्रत्येक विद्यार्थी को सादा तथा शुद्ध जीवन व्यतीत करना पड़ता था। उनको संसार की समस्त आकर्षक वस्तुओं से दूर रहकर कठोर जीवन व्यतीत करने का विद्या अभ्यास करना पड़ता था। विद्यार्थी गुरु के ही संरक्षण में रहते थे। गुरु शिष्यों से किसी प्रकार का शुल्क स्वीकार नहीं करता था। विद्यार्थियों को ब्रह्म मुहूर्त में सैया त्याग देनी पड़ती थी। दैनिक क्रिया से निवृत्त होकर स्नान के उपरांत पूजा आदि करना पड़ता था। तदोपरांत अपनी नई पाठ को याद करना पड़ता था अथवा पुराने पाठ की पुनरावृति करनी पड़ती थी।

दोपहर का भोजन लगभग 11:00 बजे होता था इसके पश्चात वह भिक्षा के लिए निकट गांव या नगर में जाना पड़ता था। प्राप्त भिक्षा से वह स्वयं भोजन बनाता था अथवा उसे गृह पत्नी को देता था और उसके द्वारा पकाए गये भोजन को ग्रहण करता था। दोपहर को लगभग 1 घंटे के विश्राम के बाद 2:00 बजे फिर अध्ययन प्रारंभ होता था। सायं काल का समय शारीरिक द्वारा में व्यतीत होता था। सूर्यास्त के समय वे संध्या तथा पूजन करते थे और रात का भोजन ग्रहण करते थे।

छात्रों को अपने गुरुओं के प्रति निम्नलिखित कर्तव्य थे जिनका पालन उनको करना पड़ता था-

- गुरुओं का पिता, राजा तथा ईश्वर के समान आदर करना।
- छात्रों को बाहर व्यवहार भी गुरुओं के प्रति सम्मानजनक होना चाहिए। उचित ढंग का अभिवादन, उनके समक्ष आसन नहीं ग्रहण करना चाहिए। उन्हें आकर्षक वस्त्र भी गुरु के सामने नहीं धारण करना चाहिए।
- उनके लिए परनिंदा निषेध था।
- गुरु की आज्ञा का पालन करना। गुरु ग्रह की अग्निपरीक्षा को प्रज्वलित रखना।
- गुरु की गायों को चराना, ईंधन इकट्ठा करना, बर्तन साफ करना, गुरु ग्रह की सफाई करना।
- सादा जीवन व्यतीत करना, विद्याध्ययन करना, संयुक्त जीवन को अपनाना तथा साधारण एवं उत्तेजना रहित भोजन करना।
- ब्रह्मचर्य का पालन करना।
- भिक्षा मांगना प्रत्येक छात्र का धार्मिक कर्तव्य था।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

वित्तीय व्यवस्था :

इस समय शिक्षा निशुल्क थी। शिक्षा दान, धार्मिक कर्तव्य था जिसके द्वारा गुरु ऋषि ऋण से मुक्ति पाता था। शिक्षा का उद्देश्य जियोकोपार्जन नहीं था और ज्ञान का प्रसार था। प्रत्येक गुरु अपने ज्ञान का हस्तांतरण अपने शिष्य को करता था और इस प्रकार वह वेद ज्ञान को अक्षय बनाए रखना अपना परम धर्म समझता था। यदि इस ज्ञान को अपने तक सीमित रखता तो उसके जीवन के साथ साथ ज्ञान का दीपक भी सदैव के लिए बुझ जाता। आता है इसका ध्येय ज्ञान की अक्षय निधि को इसी प्रकार बनाए रखना था। गुरुकुल की आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति समाज करता था। शिष्य शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत गुरु दक्षिणा देते थे, कभी-कभी समाज के धनी और दानी व्यक्ति गुरुकुल की आर्थिक आवश्यकताएं पूरी करते थे, कभी-कभी राज्य द्वारा भी गुरुकुल को सहायता प्राप्त होती थी। इस प्रकार आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के तीन साधन थे

1. गुरु दक्षिणा के रूप में प्राप्त धन।
2. समाज के धनी वर्ग से प्राप्त धन।
3. राज्य कोष से प्राप्त।

गुरुकुल अपनी नीति निर्धारण में पूर्णरूपेण स्वतंत्र थे। राज्य की ओर से उनके ऊपर किसी प्रकार का प्रतिबंध नहीं था, राज्य गुरुकुल की किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करता था।

निष्कर्ष :

वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था न तो पुस्तक विज्ञान में विश्वास रखती थी, और न ही जीविकोपार्जन का साधन थी, यह तो पूर्ण रुप से नैतिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान का सोपान थी। शिक्षा का अर्थ था की व्यक्ति को इस प्रकार से आत्म प्रकाशित किया जाए कि उसका सर्वांगीण विकास हो सके। श्रवण मनन तथा निदिध्यासन आदि शिक्षा प्राप्त करने के साधन थे। वैदिक कालीन शिक्षा के उद्देश्य, छात्र अध्यापक संबंध, अनुशासन व्यवस्था, उपनयन संस्कार की अनिवार्यता, समापवर्तक उपदेश तथा विनय शीलता, नैतिक चरित्र, कार्य अनुभव व गुरु श्रद्धा आज को वर्तमान शिक्षा प्रणाली में समाहित करके वर्तमान शिक्षा की अनेक समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। वैदिक काल में शिक्षा वैसी नहीं थी जैसी आज है, आज विद्यार्थी कुछ समय के लिए विद्यालय जाता है, और वहां शिक्षा ग्रहण करता है। समय के बच्चे गुरुकुल में जाकर सानिध्य पाते थे और वही रह कर शिक्षा ग्रहण करते थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

शर्मा, दिनेश (2014). *प्राचीन एवं अर्वाचीन शिक्षण व्यवस्था*
प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति: द्वितीय संस्करण प्रकाशक नंदकिशोर एंड ब्रदर्स, वाराणसी।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language

अग्निहोत्री, रवींद्र (2009). *आधुनिक भारतीय शिक्षा.* राजस्थान हिंदी ग्रंथ प्रकाशन, जयपुर।

पाण्डेय, रामसकल (2004). *भारतीय शिक्षा दर्शन.* विनोद पुस्तक मंदिर आगरा

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Humanity Science & English Language